पोषण की दोहरी समस्या से जूझता भारत

प्रेमा रामचंद्रन

आज़ादी के छह दशक बाद भी हमारा देश कुपोषण की समस्या से जूझ रहा है। इसके समाधान के प्रयासों के बावजूद सफलता कोसों दूर है। उधर, देश के नौनिहाल अब एक नई समस्या - अतिपोषण या मोटापे - से घिरते जा रहे हैं। ***प्रेमा रामचंद्रन*** इस आलेख के माध्यम से बच्चों की स्वास्थ्य सम्बंधी इसी दोहरी समस्या पर प्रकाश डाल रही हैं।

जिस समय भारत आज़ाद हुआ, उसका 'भविष्य' यानी बच्चे कुपोषण की गंभीर समस्या का सामना कर रहे थे। यह समस्या गहन और जीर्ण थी। इसकी कई वजहें थीं: गरीबी, क्रय शक्ति, स्वच्छ पेयजल व साफ-सफाई का अभाव, स्वास्थ्य सेवाओं तक आसान पहुंच न होने से संक्रमण का फैलाव और निम्न साक्षरता दर व जागरूकता की कमी के चलते उपलब्ध सुविधाओं का भी समुचित इस्तेमाल नहीं होना इत्यादि।

स्वास्थ्य व मानव विकास के लिए पोषण की महत्ता को समझते हुए देश ने कुपोषण की समस्या से निपटने के लिए बहुआयामी रणनीति अपनाई। खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता हासिल कर बफर स्टॉक बनाए गए। आर्थिक विकास दर में बढ़ोतरी के प्रयासों के परिणामस्वरूप गरीबी में कमी आई। काम के बदले अनाज और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के ज़रिए गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को कम कीमत पर खाद्यान्न मुहैया करवाने से गरीबों की खाद्य सुरक्षा में वृद्धि हुई। यह मानते हुए कि बाहरी संक्रमण से बच्चे सबसे जल्दी प्रभावित होते हैं, उनमें ज़रूरी ऊर्जा के स्तर को बढ़ाने के लिए देश में पूरक आहार कार्यक्रम शुरू किए गए। भारत की एकीकृत बाल विकास योजना (आईसीडीएस) और मध्यान्ह भोजन योजना बच्चों के लिए पूरक आहार के विश्व के शायद सबसे बड़े कार्यक्रम हैं। स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि व आसान पहुंच से कुपोषण की वजह से होने वाली मौतों की संख्या में भी कमी हुई।

हालांकि इन सभी कार्यक्रमों की वजह से बच्चों का पोषण स्तर बेहतर हुआ, लेकिन फिर भी सुधार की गति काफी धीमी थी। बीते पांच दशकों में मृत्यु दर में 50 फीसदी और जन्म दर में 40 फीसदी की गिरावट आई है, लेकिन बच्चों में कुपोषण के मामलों में गिरावट महज 20 फीसदी रही। यह चिंता का विषय है कि पोषण के क्षेत्र में बजट में बढ़ोतरी के बावजूद पोषण कार्यक्रम के कवरेज और गुणवत्ता में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं हुई और न ही पोषण की स्थिति में कोई सुधार हुआ।

यह विचित्र विडंबना है कि जहां एक तरफ देश बच्चों में कुपोषण की समस्या से जूझ रहा है, वहीं दूसरी ओर शहरी उच्च आय वर्ग के परिवारों के बच्चों में अतिपोषण या आम बोलचाल की भाषा में कहें तो मोटापे की समस्या पैर पसार रही है। भारत में हुए कुछ अध्ययन बताते हैं कि बचपन में कम पोषण की समस्या वयस्क होने पर मोटापे की समस्या में भी बदल सकती है।

कारणों पर नज़र

वर्तमान में भारत के विभिन्न राज्यों व ज़िलों में जन्म के समय शिशुओं के वज़न सम्बंधी आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इसकी वजह यह है कि आज भी अनेक बच्चे अस्पतालों की बजाय घरों में पैदा होते हैं जहां इन शिशुओं का तत्काल वज़न नहीं हो पाता है। जो भी आंकड़े उपलब्ध हैं, उनसे पता चलता है कि जन्म के समय लगभग एक तिहाई बच्चों का वज़न ढाई किलो से भी कम होता है। पिछले तीन दशकों के दौरान जन्म के समय कम वज़न की दर में कोई उल्लेखनीय गिरावट नहीं आई है। गर्भवती महिला का खुद कुपोषित होना, उसमें एनीमिया और प्रसव पूर्व सही देखभाल नहीं होना भारत में कम वज़न वाले बच्चे पैदा होने की प्रमुख वजहें मानी जाती हैं। गर्भवती महिला की प्रसव पूर्व उचित

देखभाल से न केवल समय से पूर्व प्रसव के मामलों में गिरावट आएगी, बल्कि इससे कम वज़न वाले बच्चे पैदा होने की दर में भी कमी हो सकेगी।

साठ के दशक में हुए अध्ययनों से पता चलता है कि विकसित देशों के विपरीत भारत में समय पर पैदा होने वाले बच्चों का भी वज़न कम होता है। इन बच्चों का वज़न कम इसलिए होता है, क्योंकि गर्भाशय में उनकी वृद्धि में गतिरोध आ जाता है। ऐसे बच्चों को ज़रूरी देखभाल मिले, समुचित स्तनपान करवाया जाए और संक्रमण से बचाया जाए, तो उनमें से अधिकांश जी जाते हैं, जबकि समय पूर्व प्रसव वाली संतानों के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता। केरल ने इस दिशा में भी उल्लेखनीय प्रगति की है। उसने प्रसव पूर्व देखभाल को बढ़ावा देकर कम वज़न वाले शिशुओं की मृत्यु दर में गिरावट हासिल की है। इससे पता चलता है कि इस मामले में विकसित देशों से होड़ की जा सकती है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन ने शिशु मृत्यु दर में कमी लाने के लिए दो स्तरीय रणनीति अपनाई है। इसके तहत उन राज्यों में जहां पर्याप्त ढांचागत सुविधाएं मौजूद हैं, वहां अस्पतालों में प्रसव को बढ़ावा दिया जाएगा ताकि नवजातों की बेहतर देखभाल सुनिश्चित हो सके। उन राज्यों में जहां अधिकांश प्रसव घरों में होते हैं, वहां आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को नवजात शिशुओं का वज़न लेने के काम में लगाया जाएगा। जिन शिशुओं का वज़न 2.2 किलो से कम होगा, उन्हें उचित देखभाल के लिए किसी अस्पताल को रेफर किया जाएगा। इस रणनीति की सफलता के परीक्षण के लिए किए गए एक अध्ययन से पता चला है कि अगर इसे बड़े स्तर पर अपनाया जाए तो शिशु मृत्यु दर में उल्लेखनीय कमी आएगी।

स्तनपान और पूरक आहार

बच्चों का पोषण व स्वास्थ्य की स्थिति जन्म के समय उनके वज़न, उनके आहार और उनमें संक्रमण की उपस्थिति या अनुपस्थिति पर निर्भर करती है। न्यूट्रीशन फाउंडेशन आफ इंडिया ने दिल्ली के कम आय वर्ग वाले परिवारों के बच्चों पर एक अध्ययन किया है। इसके अनुसार पहले छह माह तक केवल स्तनपान करने वाले बच्चों का विकास अच्छा होता है। अगर इसके बाद भी बच्चे को केवल स्तनपान ही करवाया जाए तो फिर उसके वज़न में कमी आती है। पहले मामले में बच्चों के बीमार होने की दर कम रहती है, लेकिन दूसरे मामले में उम्र बढ़ने के साथ-साथ यह दर भी बढ़ती जाती है। एक पखवाड़े तक लगातार बीमार रहने वाले बच्चों में कुपोषण की दर अधिक पाई गई है।

भारत में स्तनपान को प्रोत्साहन के नतीजे उत्साहवर्द्धक रहे हैं और आज पूरे देश में यह प्रचलन में है। हालांकि अब भी यह संदेश लोगों तक नहीं पहुंच पाया है कि केवल स्तनपान पर निर्भरता छह माह तक ही उचित है और इसके बाद धीरे-धीरे बच्चे को अन्य अर्द्ध ठोस आहार भी देना होगा। ऐसा करना शिशुओं में कुपोषण को रोकने के लिए ज़रूरी है। राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वे के आंकड़े बताते हैं कि स्तनपान हर जगह प्रचलित है और यह औसतन दो साल तक करवाया जाता है। हालांकि 5 माह तक के शिशुओं में केवल स्तनपान की दर अब भी कम है। 6 से 9 माह तक के शिशुओं में ऊपर का आहार देने के मामले में भारतीय अब भी पीछे हैं। राज्यों के बीच भी काफी अंतर पाया गया है। तय समय सीमा से पहले ही अर्द्ध ठोस आहार की शुरुआत करने की समस्या दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और पंजाब में अधिक है, जबकि तय समय सीमा के काफी बाद ही अर्द्ध ठोस आहार की शुरुआत करने की समस्या उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान व उड़ीसा में ज़्यादा है। इन दोनों ही मामलों में केरल का प्रदर्शन काफी अच्छा है। यही वजह है कि वहां कुपोषण की दर भी अपेक्षाकृत कम है।

तय समय सीमा से पहले ही अर्द्ध ठोस आहार देने या फिर काफी विलंब से इसकी शुरुआत करने का सीधा-सीधा मतलब है कि संक्रमण और कुपोषण के खतरे को न्यौता देना। अगर समय रहते संक्रमण का पता न चल पाए और किसी अस्पताल में उसका सही उपचार न

करवाया जाए तो बच्चे की जान तक जा सकती है। विभिन्न गणनाओं से पता चलता है कि सही समय तक स्तनपान करवाने और समय पर पूरक आहार शुरू कर देने से शिशु मृत्यु दर में 20 फीसदी तक की गिरावट लाई जा सकती है। आईसीडीएस के समन्वित प्रयासों और प्राथमिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की मदद से शिशु को उसके पहले महत्वपूर्ण वर्ष में सेहतमंद और सुपोषित बनाया जा सकता है।

नाज़ुक उम्र

स्कूल-पूर्व उम्र तक के बच्चे स्वास्थ्य की दृष्टि से बेहद संवेदनशील होते हैं। उनके पोषण व सेहत के स्तर से ही यह पता चलता है कि स्वास्थ्य के मामले में किसी समाज या देश की स्थिति क्या है। नेशनल न्यूट्रीशन मानीटरिंग ब्यूरो ने वर्ष 2000 में देश के नौ राज्यों के ग्रामीण इलाकों में बच्चों, किशोरों और वयस्कों की ऊर्जा प्राप्ति की स्थिति का एक सर्वे करवाया था। इस सर्वे में प्राप्त ऊर्जा प्राप्ति के आंकड़ों को भोजन की निर्धारित मात्रा के प्रतिशत के रूप में देखने पर पता चला है कि अन्य वर्गों की तुलना में स्कूल-पूर्व बच्चों में औसत ऊर्जा प्राप्ति का प्रतिशत न्यूनतम था।

परिवारों में भोजन के वितरण सम्बंधी ब्यूरो के आंकड़े दर्शाते हैं कि ऐसे परिवारों की संख्या 30 फीसदी बनी हुई है जिनमें बड़ों व स्कूल-पूर्व बच्चों दोनों को पर्याप्त मात्रा में भोजन मिलता है। पिछले 20 सालों में ऐसे परिवारों की संख्या में तो तेज़ी से कमी आई है जिन्हें पर्याप्त मात्रा में भोजन नहीं मिल पाता है। फिर भी ऐसे परिवारों की संख्या लगभग दुगनी हो गई है जिनमें बड़ों को तो पर्याप्त भोजन मिलता है, लेकिन स्कूल-पूर्व बच्चों को नहीं मिलता। इससे यही साबित होता है कि स्कूल-पूर्व बच्चों को उचित मात्रा में भोजन नहीं मिल पाने की वजह गरीबी व अन्न का अभाव नहीं, बल्कि उनकी देखभाल के प्रति लापरवाही है।

तीन साल तक के बच्चों में ऊर्जा प्राप्ति व कुपोषण सम्बंधी आंकड़ों से पता चलता है कि ऊर्जा प्राप्ति में कोई सुधार न होने के बावजूद कुपोषण के मामलों में लगातार गिरावट आई है। इसकी मुख्य वजह लोगों की स्वास्थ्य सेवाओं तक आसान पहुंच और बच्चों में संक्रमण का प्रभावी व समय पर उपचार करवाना हो सकती है।

वज़न व लंबाई के आकलन के अनुसार पिछले तीन दशकों में बच्चों के कुपोषण के मामलों में काफी तेज़ी से गिरावट आई है। इसके बावजूद बच्चों की औसत लंबाई अब भी काफी कम है। कम वज़न बच्चों की संख्या में भी गिरावट आई है, लेकिन अगर राष्ट्रीय स्वास्थ्य सांख्यिकी परिषद व विश्व स्वास्थ्य संगठन के मापदंडों के हिसाब से देखें तो अब भी आधे बच्चे कम वज़न वर्ग में ही आएंगे।

यह बात विशेष तौर पर गौरतलब है कि केरल में गरीब बच्चों के पोषण की जो स्थिति है, वही स्थिति उत्तरप्रदेश के सम्पन्न परिवारों के बच्चों की भी है। इसकी मुख्य वजह यही है कि जहां केरल में स्वास्थ्य सुविधाओं तक आम लोगों की पहुंच बहुत आसान है व परिवारों में भोजन का वितरण भी समान है, वहीं उत्तरप्रदेश में स्थिति इसके ठीक विपरीत है। आंकड़े यह साबित कर देते हैं कि पौष्टिक भोजन व स्वास्थ्य देखभाल का अभाव जैसे कारक स्कूल-पूर्व बच्चों में कुपोषण की मुख्य वजह बनते हैं।

उक्त तथ्यों के आईने में यह ज़रूरी हो गया है कि हमारा सारा ज़ोर इन मुद्दों पर रहना चाहिएः

1. स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं/आंगनवाडी कार्यकताओं द्वारा कुपोषण की रोकथाम के लिए दी जाने वाली पोषण शिक्षा इन बातों पर केंद्रित होनी चाहिए -

(अ) शिशु को सही तरीके से आहार मिलना सुनिश्चित हो (यह भी कि छह माह तक के शिशु को केवल स्तनपान मिले और उसके बाद सही समय पर अर्द्ध ठोस आहार शुरू हो)।

(ब) परिवार के सभी सदस्यों के बीच उनकी ज़रूरत के अनुरूप भोजन का वितरण हो।

2. कुपोषण का सही समय पर पता चल सके, इसके लिए पूरे देश में शिशुओं, स्कूल-पूर्व बच्चों व स्कूली बच्चों

की अलग-अलग जांच सुनिश्चित करना।

3. निम्नलिखित माध्यमों से कुपोषण का प्रबंधन सुनिश्चित करना :

(अ) कुपोषित बच्चों के लिए पूरक आहार और स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया करवाना।

(ब) इन बच्चों और उनके परिजनों की प्रभावी निगरानी।

नए मापदंड

अप्रैल 2006 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्कूल-पूर्व बच्चों के विकास के आकलन के लिए नए मापदंड जारी किए थे। ये मापदंड भारत सहित विभिन्न देशों में स्तनपान करने वाले बच्चों के अध्ययन के आधार पर तैयार किए गए थे। स्तनपान को बढ़ावा देने की संगठन की नीति के मद्देनज़र उसने सदस्य देशों से इन नए मापदंडों का इस्तेमाल करने की सिफारिश की थी। साथ ही संगठन ने स्कूल-पूर्व बच्चों की कुपोषण व अतिपोषण की समस्या के समय पर निवारण के लिए बॉडी मास इंडेक्स का इस्तेमाल करने की सलाह दी थी।

जिला स्तर पर करीब 2.4 लाख स्कूल-पूर्व बच्चों के सर्वे (वज़न-बनाम-उम्र) के आंकड़ों से पता चलता है कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य सांख्यिकी परिषद व विश्व स्वास्थ्य संगठन के मापदंडों के आधार पर कुपोषण के आकलन में भारी भिन्नता है। बच्चे के लिए सबसे अहम माने जाने वाले पहले साल के दौरान कम वज़न की दर में सर्वाधिक अंतर पाया गया। पहले छह माह के दौरान बच्चों में कम वज़न की दर की गणना विश्व स्वास्थ्य संगठन के नए मापदंडों के अनुसार की गई तो वह परिषद के मापदंडों की तुलना में ज़्यादा थी जबकि एक साल से ज़्यादा उम्र के बच्चों के कम वज़न की दर परिषद के मापदंडों की बनिस्बत न्यून पाई गई। इसका मतलब यह नहीं निकाला जाना चाहिए कि कुपोषण की दर घट रही है।

न्यूट्रीशन फाउंडेशन ऑफ इंडिया द्वारा दिल्ली के बच्चों पर किया गया अध्ययन बताता है कि कुपोषण की समस्या कम आय वर्ग वाले परिवारों में ज़्यादा है जहां के बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़ते हैं, जबकि मोटापे की समस्या उच्च आय वर्ग के बच्चों में दिखाई दी जो निजी स्कूलों में अध्ययनरत हैं। यह समस्या छह साल या उससे अधिक उम्र के बच्चों में ज़्यादा पाई गई है। लंबाई और वज़न को लेकर इसी फाउंडेशन द्वारा किया गया अध्ययन कहता है कि सम्पन्न वर्ग के परिवारों के बच्चों की भी लंबाई उनके वज़न के हिसाब से कम पाई गई। अध्ययन के मुताबिक हर कक्षा में कुछ अधिक वज़न के या मोटापे से ग्रस्त बच्चे पाए गए। हालांकि दस साल के बाद की उम्र के बच्चों में इसमें कुछ कमी पाई गई।

भारत अब ऐसे दौर में पहुंच गया है जहां वह कुपोषण और अतिपोषण दोनों समस्याओं का सामना साथ-साथ कर रहा है। इसी संदर्भ में हमें इस बात का आकलन भी करना चाहिए कि क्या हम कुपोषण और अतिपोषण की समय पर पहचान के लिए सही मापदंडों का इस्तेमाल कर रहे हैं? अगर हम विकसित देशों के मापदंडों का अनुसरण कर रहे हैं तो उसमें सावधानी बरतनी होगी। भारतीय बच्चे विकसित देशों के बच्चों से छोटे होते हैं। ऐसे में अगर उम्र के अनुरूप वज़न में विकसित देशों का फार्मूला इस्तेमाल करेंगे तो हमारे यहां के बच्चे अल्पपोषित या अविकसित की श्रेणी में ही गिने जाएंगे हालांकि लंबाई के अनुरूप उनका वज़न उचित हो सकता है।

चिकित्सकों ने बच्चों को कई श्रेणियों में बांटकर उपाय सुझाए हैं:

- सामान्य लंबाई व सामान्य वज़न वाले बच्चे (इनके लिए किसी भी उपाय की ज़रूरत नहीं है)।

- वे बच्चे जो अधिक लंबे, लेकिन दुबले-पतले हैं; इन्हें अधिक भोजन की ज़रूरत है)।

- वे बच्चे जिनका वज़न उनकी लंबाई के अनुरूप है, लेकिन वे नाटे कद के हैं। (नाटे कद के होने के बावजूद किसी उपाय की ज़रूरत नहीं है)।

- वे बच्चे जिनका वज़न उनके कद के हिसाब से

$$\text{बॉडी मास इंडेक्स} = \frac{\text{वज़न (किलोग्राम में)}}{\text{ऊंचाई (मीटर में) का वर्ग}}$$

अधिक है (इनके लिए व्यायाम ज़रूरी है)।

ये श्रेणियां उम्र व बॉडी मास इंडेक्स के आधार पर तैयार की गई हैं। बॉडी मास इंडेक्स का व्यापक इस्तेमाल नहीं किया जाता क्योंकि उम्र के साथ इसमें भिन्नता आ जाती है। इसलिए बढ़ते बच्चों के बॉडी मास इंडेक्स की गणना करना इतना आसान नहीं होता। वैसे न्यूट्रीशन फाउंडेशन ऑफ इंडिया के अनुसार बच्चों में कुपोषण या अतिपोषण का पता लगाने के लिए उम्र के अनुरूप वज़न की गणना की अपेक्षा उम्र के अनुरूप बॉडी मास इंडेक्स की गणना कहीं अधिक संवेदनशील सूचकांक है।

तो कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि इस समय भारत सहित दुनिया के सभी विकासशील देश सामाजिक-आर्थिक और पोषण सम्बंधी संक्रमण काल से गुज़र रहे हैं। पिछले एक दशक में भारत में पोषण की स्थिति में संक्रमण की रफ्तार तेज़ हुई है। कुपोषण अब भी देश की एक बड़ी स्वास्थ्य समस्या बनी हुई है, लेकिन अब इसके साथ-साथ शहरी उच्च आमदनी वर्ग में अतिपोषण या मोटापा भी एक नई समस्या के रूप में सामने आ रहा है। पांच दशक पहले तक कुपोषण के लिए गरीबी प्रमुख ज़िम्मेदार थी, लेकिन अब आहार की गलत आदतें और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच न होना भी इसके प्रमुख कारक माने जाने लगे हैं।

अगले एक दशक में हम कुपोषण व अल्पपोषण की समस्या पर काफी हद तक काबू पा सकते हैं। इसके लिए हमें सभी लोगों को पोषण व स्वास्थ्य शिक्षा सुनिश्चित करने के साथ-साथ स्वास्थ्य सुविधाओं तक उनकी पहुंच को भी आसान बनाना होगा। किस्मत से भारत में अतिपोषण की समस्या अपेक्षाकृत कम है। मोटापे से जुड़े सेहत सम्बंधी खतरों व परेशानियों से हम सभी अवगत हैं। ऐसे में स्कूली बच्चों को प्रभावी पोषण व स्वास्थ्य सम्बंधी शिक्षा प्रदान कर हम भविष्य में अतिपोषण विस्फोट को अभी से नियंत्रित कर सकते हैं। ऐसे में यही मौका है जब हम पोषण सम्बंधी दोनों आयामों को समझकर बच्चों में कुपोषण और अतिपोषण की समस्या का प्रभावी ढंग से मुकाबला करें। ***(स्रोत फीचर्स)***

अगले अंक में

- **रामसेतु प्राकृतिक है, मानव निर्मित नहीं**
- **क्यों न दिल्ली से कारों को अलविदा कहें**
- **ज्ञान आयोग के सुझाव**
- **जीव विज्ञान का एक प्रिय पौधा**
- **स्टेम कोशिकाएं : शरीर का सुप्त ज्वालामुखी?**